Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

भारतीय समाज तथा सामाजिक समस्याएँ

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: CSM10

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

भारतीय समाज तथा सामाजिक समस्याएँ

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 011-47532596, 8750187501
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiias.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिए निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

UPSC DLP

विषय सूची (Contents)

1.	भारतीय समाज की मुख्य विशेषताएँ	5–10
2.	महिलाओं की भूमिका	11–21
3.	महिलाओं की समस्याएँ और उनके रक्षोपाय	22–61
4.	महिला संगठन	62–69
5.	शहरीकरण/नगरीकरण	70–88
6.	भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के प्रभाव	89–99
7.	सामाजिक सशक्तीकरण	100–109
8.	सांप्रदायिकता	110–116
9.	क्षेत्रवाद	117–125
10.	जनसंख्या एवं संबद्ध मुद्दे	126–136
11.	गरीबी और विकासात्मक मुद्दे	137–151
12.	धर्मनिरपेक्षता	152–160

अध्याय
1

भारतीय समाज की मुख्य विशेषताएँ (Salient features of Indian Society)

1.1 विविधता	1.8 वर्णाश्रम व्यवस्था
1.2 प्राचीनता एवं स्थायित्व	1.9 जाति-व्यवस्था
1.3 सहिष्णुता	1.10 कर्म एवं पुनर्जन्म का सिद्धांत
1.4 समन्वय	1.11 संयुक्त परिवार
1.5 अध्यात्मवाद	1.12 पुरुषार्थ की अवधारणा
1.6 धर्म की प्रधानता	1.13 संस्कार
1.7 अनुकूलनशीलता	1.14 भारत की सामाजिक विविधता

समाज कई प्रकार के हो सकते हैं। अलग-अलग आधारों पर अलग-अलग समाजों का निर्माण हुआ है, जैसे- ग्रामीण समाज, शहरी समाज, पशुचारण समाज, कृषक समाज, आधुनिक समाज, उत्तर आधुनिक समाज, अमेरिकी समाज, ब्रिटिश समाज, यूरोपीय समाज, हिन्दू समाज, पारसी समाज आदि। इन सभी समाजों की अपनी-अपनी विशेषताएँ होती हैं, जिनके आधार पर हम उन्हें अन्य समाजों से अलग कर सकते हैं। हर समाज की तरह भारतीय समाज की भी कुछ विशेषताएँ हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:

1.1 विविधता *(Diversity)*

विविधता में एकता भारतीय समाज की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है। यहाँ प्रजाति, जनजाति, जाति, भाषा, धर्म आदि आधारों पर व्यापक विविधताएँ विद्यमान हैं, लेकिन इसके बावजूद उनमें अद्‌भुत एकता पाई जाती है।

1.2 प्राचीनता एवं स्थायित्व *(Ancientness and Stability)*

भारतीय समाज प्राचीनतम समाजों में से एक है। विश्व की अन्य प्राचीन संस्कृतियाँ, जैसे- मिस्र, सीरिया, बेबीलोन, रोम आदि विनष्ट हो गईं, लेकिन भारतीय संस्कृति व समाज-व्यवस्था आज भी कायम है। आज भी हमारे यहाँ वैदिक धर्मों को मानने की परंपरा है। भगवद् गीता, महावीर और गौतम बुद्ध के उपदेश आज भी देश में जीवंत बने हुए हैं। भारतीय जन-जीवन का मौलिक आधार आज भी काफी हद तक वही है जो प्राचीन भारत में विद्यमान था।

1.3 सहिष्णुता *(Tolerance)*

सहिष्णुता भारतीय समाज की एक अद्‌भुत विशेषता है। यहाँ सभी धर्मों, जातियों, प्रजातियों एवं संप्रदायों के प्रति सहिष्णुता एवं प्रेम का भाव पाया जाता है। भारत में समय-समय पर अनेक विदेशी संस्कृतियों का आगमन हुआ और सभी को विकसित होने का अवसर प्राप्त हुआ। इनमें से किसी भी संस्कृति का दमन नहीं किया गया और न ही किसी समूह पर कोई संस्कृति थोपी गई। यहाँ आज भी हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध और जैन सभी अपनी-अपनी विशेषताएँ बनाए हुए हैं।

1.4 समन्वय *(Coordination)*

भारतीय समाज के सहिष्णु स्वभाव के कारण ही इसमें भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का समन्वय हो पाया है। यदि विभिन्न संस्कृतियों को नदियाँ मान लिया जाए तो भारतीय संस्कृति वह सागर है जहाँ सभी नदियाँ आकर मिलती हैं। विभिन्न संस्कृतियों, जैसे- जनजातीय, हिन्दू, मुस्लिम, शक, हूण, सीथियन, ईसाई आदि से भारतीय संस्कृति नष्ट नहीं हुई वरन् इन संस्कृतियों ने भारतीय समाज में समन्वय एवं एकता ही स्थापित की है। आजकल इस विशेषता को 'बहुसंस्कृतिवाद' (Multiculturalism) कहा जाता है। 'सामासिक संस्कृति' (Composite Culture) भी इसी विशेषता को इंगित करने वाला शब्द है।

4. **सिख धर्म:** सिख धर्म के अनुयायियों का संकेंद्रण पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और जम्मू के क्षेत्रों में ज़्यादा है। मूल तौर पर सिख धर्म में जाति प्रथा को अस्वीकार कर दिया गया और प्रत्येक पुरुष को अपने नाम के आगे 'सिंह' और प्रत्येक महिला को 'कौर' लिखने को कहा गया। लेकिन समय बीतने के साथ सिखों में भी जाति व्यवस्था के अवगुण दिखने लगे। सामाजिक पदानुक्रम में निचले स्थान पर रहने वालों को मज़हबी सिख कहा गया और पंजाब के ग्रामीण इलाकों में उनके लिये अलग गुरुद्वारे बनाए गए। अभी भी सिखों में 'जट सिख' समूह ताकतवर माना जाता है, जबकि निम्न जातियों से सिख बने समूह (जैसे- चमार सिख) कमज़ोर माने जाते हैं।
5. **बौद्ध धर्म:** बौद्ध धर्म भारत में कभी बेहद शक्तिशाली धर्म बन गया था और उसे अनेक प्रतापी वंशों और राजाओं का संरक्षण हासिल था। बाद में महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं की व्याख्या पर उभरे मतभेदों के कारण इनके दो उप-संप्रदाय हीनयान और महायान अस्तित्व में आए। समय बीतने के साथ ही बौद्ध धर्म विलुप्त होने की हालत में आ गया। सन् 1953 में संविधान निर्माता डॉ. भीमराव अम्बेडकर की हिन्दू धर्म त्याग कर बौद्ध धर्म स्वीकार करने की घोषणा के साथ बौद्ध धर्म में एक नई हलचल देखी गई। डॉ. अम्बेडकर ने हीनयान या महायान शाखाओं को अस्वीकार करते हुए कहा कि हमारा बौद्ध धर्म नया बौद्ध धर्म 'नवयान' (Navayana) है। इस परंपरा को 'नवबौद्ध मत' (Neo Buddhism) या 'पश्चिमी बौद्धमत' की संज्ञा दी जाती है। नवबौद्धों का संकेंद्रण महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक है।
6. **जैन धर्म:** जैन धर्म बौद्ध धर्म के समकालीन ही विकसित हुआ। अहिंसा, ब्रह्मचर्य आदि इस धर्म के केंद्रीय विचार हैं। जैन अनुयायी दो संप्रदायों श्वेतांबर और दिगंबर में बँटे हुए हैं। इनमें दिगंबर संप्रदाय के लोग धर्म संबंधी मान्यताओं का कठोरता से पालन करते हैं, जबकि श्वेतांबर संप्रदाय में लचीलापन दिखाई पड़ता है। जैन धर्म के लोगों का संकेंद्रण महाराष्ट्र, राजस्थान और गुजरात में ज़्यादा है।
7. **अन्य धर्म:** देश में इन प्रमुख धर्मों के अलावा पारसी, यहूदी और आदिवासी धर्मों को मानने वाले भी बड़ी संख्या में रहते हैं। पारसी धर्म के लोग मूल रूप से ईरान से भारत आए और यहीं बस गए। अधिकांश पारसी मुंबई और दिल्ली जैसे महानगरों में रहते हैं। यहूदी धर्म के अनुयायी बहुत कम संख्या में हैं। देश के अधिकांश यहूदी कोचीन और महाराष्ट्र में संकेंद्रित हैं। आदिवासी समुदायों के लोग अपने-अपने विशिष्ट धर्मों में विश्वास रखते हैं।

इस तरह भारत को धार्मिक विविधताओं का देश कहा जा सकता है।

सांस्कृतिक विविधता *(Cultural Diversity)*

भारत में विभिन्न स्तरों पर सांस्कृतिक विविधता दिखाई पड़ती है। राज्यवार देखें तो यहाँ के सभी राज्यों की संस्कृति एक-दूसरे से पर्याप्त भिन्न है। लोगों का खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा, सोचने का तरीका, अभिवृत्तियाँ, नृत्य, संगीत और अन्य कलाएँ अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग तरह की हैं। दूसरे स्तर पर हमें एक ही राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में भी भिन्न संस्कृति के आयाम दिखने लगते हैं, जैसे- उत्तराखंड राज्य में गढ़वाली और कुमाऊँनी संस्कृति क्षेत्र मिलते हैं। राजस्थान में मारवाड़, शेखावटी, ढूंढार, मेवाड़ आदि; उत्तर प्रदेश में ब्रज, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, अवधी, बुंदेलखंड, बघेलखंड, रुहेलखंड आदि; गुजरात में सौराष्ट्र, कच्छ आदि; बिहार में भोजपुरी, मगही और मिथिला क्षेत्र एक ही राज्य में कई संस्कृतियाँ होने के प्रमुख उदाहरण हैं। इन सांस्कृतिक क्षेत्रों में भी कई उपक्षेत्र हैं जिनकी अपनी विशिष्टताएँ होती हैं।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न

1. सहिष्णुता एवं प्रेम की भावना न केवल अति प्राचीन समय से ही भारतीय समाज का एक रोचक अभिलक्षण रही है अपितु वर्तमान में भी यह एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। सविस्तार स्पष्ट कीजिये। **UPSC (Mains) 2017**
2. भारत में विविधता के किन्हीं चार सांस्कृतिक तत्वों का वर्णन कीजिये और एक राष्ट्रीय पहचान के निर्माण में उनके आपेक्षिक महत्त्व का मूल्य निर्धारण कीजिये। **UPSC (Mains) 2015**
3. संयुक्त परिवार का जीवन चक्र सामाजिक मूल्यों के बजाय आर्थिक कारकों पर निर्भर करता है। चर्चा कीजिये। **UPSC (Mains) 2014**
4. वर्तमान में भारतीय समाज द्वारा सामना की जाने वाली प्रमुख चुनौतियों की चर्चा कीजिये। हमारे समाज को अधिक समावेशी बनाने के लिये इन चुनौतियों से किस प्रकार निपटा जा सकता है?
5. "भारत की विविधता में विश्वबंधुत्ववाद और एक समान विश्व का आधारभूत सिद्धांत प्रदर्शित होता है लेकिन इसे निरंतर चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।" आलोचनात्मक टिप्पणी करें।

अध्याय
2

महिलाओं की भूमिका (Role of Women)

2.1 परिचय
2.2 इतिहास में महिलाओं की भूमिका
2.3 राजनीति में महिलाओं की भूमिका
2.4 शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका
2.5 स्वास्थ्य के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका
2.6 अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भूमिका
2.7 कृषि के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका
2.8 मीडिया में महिलाओं की भूमिका
2.9 विज्ञान के क्षेत्र में महिलाएँ
2.10 खेल में महिलाओं की भूमिका

2.1 परिचय *(Introduction)*

प्राचीन काल से लेकर वर्तमान समय तक भारत में महिलाओं की भूमिका का इतिहास काफी गतिशील रहा है। दूसरे शब्दों में, समय के साथ महिलाओं की भूमिकाओं ने कई बड़े बदलावों का सामना किया है। एक समय था जब भारतीय महिलाओं की भूमिका सिर्फ घर की चहारदीवारी तक सीमित थी, वहीं आज उनकी भूमिकाओं ने घर की चहारदीवारी को तोड़ते हुए उन्हें अंतरिक्ष में पहुँचा दियाहै।

पिछले कुछ सालों में महिलाएँ कई क्षेत्रों में आगे आई हैं। उनमें नया आत्मविश्वास पैदा हुआ है और वे अब हर काम को चुनौती से भी आगे अवसर के रूप में स्वीकार करने लगी हैं। अब महिलाएँ सिर्फ चूल्हे-चौके तक ही सीमित नहीं रह गई हैं या फिर नर्स, एयर होस्टेस या रिसेप्शनिस्ट ही नहीं रह गई हैं, बल्कि उन्होंने हर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करा दी है। अब हर वैसा क्षेत्र जहाँ पहले केवल पुरुषों का ही वर्चस्व था, वहाँ स्त्रियों को काम करते देखकर हमें आश्चर्य नहीं होता है। महिलाओं को काम करते देखना हमारे लिये अब आम बात हो गई है। महिलाओं में इतना आत्मविश्वास पैदा हो गया है कि वे अब किसी भी विषय पर बेझिझक बात करती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि अब कोई भी क्षेत्र महिलाओं से अछूता नहीं रहा है।

आज भारत में महिलाएँ उस दिशा में अनुगमन कर रही हैं, जिसे पाश्चात्य देशों की महिलाओं ने 80 वर्ष पहले अपनाया था अर्थात् समान मानव की तरह व्यवहार करने की मांग। आज यह और अधिक स्पष्ट हो गया है कि भारतीय महिलाएँ अपनी बेहद पारंपरिक और धार्मिक संस्कृति के बावजूद पश्चिमी नारीवाद के प्रति अनुकूलित हो सकती हैं। यद्यपि भारतीय समाज की जटिलताओं के कारण भारत में महिलाओं का विकास उनकी पाश्चात्य समकक्षों की तुलना में पूर्णत: परिवर्तित संदर्भ में हुआ, लेकिन मुख्य लक्ष्य समान हैं: समाज, कार्यस्थलों, विद्यालयों तथा घर में पुरुष और महिला में समानता के लिये स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार, शिक्षा और रोज़गार के अवसर। पुरुषों के समकक्ष स्वतंत्र धरातल पाने के लिये महिलाओं की आकुलता स्पष्ट देखी जा सकती है।

भारतीय महिलाओं के समक्ष जाति प्रथा, धार्मिक परंपराओं, प्राचीन प्रचलित भूमिकाओं जैसी अन्य चुनौतियाँ तो हैं ही, साथ ही उसे पहले से अधिक मज़बूत भारतीय समाज के पुरुष सत्तात्मक ताने-बाने से भी लोहा लेना है। एक समय था जब यह स्थिति स्वीकार्य थी, लेकिन पाश्चात्य महिला क्रांति तथा अनुभूति के पश्चात् समानता के अधिकार की वकालत करने वाले राष्ट्रीय तथा वैश्विक स्तर के संगठनों तथा महिलाओं के स्वतंत्र समूहों के योगदान से महिलाओं की भूमिका में धीरे-धीरे विकास के लक्ष्य परिलक्षित हो रहे हैं। इन सभी का योगदान सराहनीय है, लेकिन अभी भी काफी कुछ करना शेष है, जिसके लिये पुरुषों को अपना पूरा सहयोग देना होगा। अब वे महिलाएँ नहीं हैं जो स्वयं पर हुए अत्याचारों और असुरक्षा का वर्णन करने वाली पुस्तकों की रचना करती थीं। आज की भारतीय नारी की रचनाओं को पुलित्ज़र पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है, जो पुरुष लेखकों को यह बताने के लिये पर्याप्त है कि वे कितनी प्रतिभाशाली तथा क्षमतावानहैं।

भारतीय समाज कल्पना चावला, सानिया मिर्ज़ा, सायना नेहवाल, बरखा दत्त, शबाना आज़मी इत्यादि जैसी आज के भारत की असाधारण महिलाओं को लेकर गौरवान्वित महसूस करता है। निश्चित ही एक ऐसे समाज में जहाँ एक समय महिला का शिक्षित होना आश्चर्य की दृष्टि से देखा जाता था, यह आश्चर्य जैसा ही प्रतीत होता है कि आज विद्यालयों में शिक्षा देने का अधिकांश दायित्व महिलाएँ ही उठा रही हैं। उच्च शिक्षा प्राप्त कर महाविद्यालयों में प्राध्यापक होने वाली महिलाओं की संख्या भी कम नहीं है। महिलाओं ने व्यक्तिगत स्तर पर जो उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं, उसने लोगों का ध्यान आकर्षित किया है और आज महिलाएँ कई क्षेत्रों में पुरुषों की तुलना में बेहतर कार्य करने वाली मानी जाती हैं।

अध्याय
3

महिलाओं की समस्याएँ और उनके रक्षोपाय (Women's Problems and their Remedies)

3.1 परिचय
3.2 महिलाओं के विरुद्ध अपराध
3.3 महिलाओं के संरक्षण के लिये संवैधानिक प्रावधान
3.4 घरेलू हिंसा
3.5 दहेज़ प्रथा
3.6 कन्या भ्रूण हत्या एवं चयनित गर्भपात
3.7 बाल विवाह
3.8 महिलाओं का अश्लील चित्रण
3.9 महिलाओं से छेड़छाड़ एवं यौन उत्पीड़न
3.10 वेश्यावृत्ति
3.11 बलात्कार
3.12 महिलाओं का दुर्व्यापार
3.13 ऑनर किलिंग

3.1 परिचय *(Introduction)*

स्वतंत्र भारत में महिलाएँ तुलनात्मक रूप से सम्मानजनक स्थिति में हैं। कुछ समस्याएँ जो सदियों से महिलाओं को परेशान कर रही थीं, अब नहीं पाई जाती हैं। सती-प्रथा, विधवा पुनर्विवाह पर निषेध, विधवाओं का शोषण, देवदासी प्रथा, पर्दा-प्रथा आदि कुरीतियाँ अब लगभग समाप्त हो गई हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र में विकास, शिक्षा का सार्वभौमीकरण, सामाजिक और राजनीतिक आंदोलनों, आधुनिकीकरण और इसी तरह के विकास से महिलाओं के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में बदलाव आया है।

इसका मतलब यह नहीं है कि अब महिलाएँ समस्याओं से पूरी तरह से मुक्त हो गई हैं। इसके विपरीत, बदलते परिदृश्यों ने महिलाओं के लिये नई समस्याएँ पैदा की हैं। वे अब नए तनावों और दबावों से घिरी हुई हैं।

3.2 महिलाओं के विरुद्ध अपराध *(Crimes Against Women)*

जब हम महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों की बात करते हैं तो इससे यह स्पष्ट होता है कि कुछ विशेष प्रकार के अपराध सिर्फ महिलाओं के विरुद्ध ही किये जाते हैं। भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code–IPC) के तहत मुख्य तौर पर निम्नलिखित अपराधों को महिलाओं के विरुद्ध अपराध माना गयाहै-

(i) बलात्कार (Rape), (ii) अपहरण या भगा ले जाना, (iii) दहेज़ हत्या, (iv) उत्पीड़न (शारीरिक एवं मानसिक), (v) छेड़छाड़ (Molestation), (vi) यौन उत्पीड़न (Sexual harassment) व (vii) लड़कियाँ मंगवाना या लाना (Importation of Girls)।

महिलाओं और लड़कियों को जीवन में अपराध का सामना कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, पारिवारिक व्यभिचार और कथित ऑनर किलिंग के रूप में करना पड़ता है। यह दहेज़ संबंधी हत्या या घरेलू हिंसा, दुष्कर्म, यौन शोषण, दुर्व्यवहार, दुर्व्यापार, निरादर और निष्कासन के रूप में हो सकता है। महिलाओं एवं लड़कियों को किसी वस्तु या संपत्ति की तरह खरीदा एवं बेचा जाता है। विवाहेतर संबंधों के अपराध में उन्हें निर्वस्त्र कर एवं उनके सिर मुड़ाकर सार्वजनिक तौर पर घुमाया जाता है। दहेज़ से संबंधित मामलों में उन्हें ज़िंदा जलाकर मार दिया जाता है। कार्यस्थलों पर उनका शारीरिक एवं मानसिक उत्पीड़न किया जाता है। तेज़ाब से हमला, अश्लील चित्रण, बलात्कार, तस्करी एवं छेड़छाड़ महिलाओं से जुड़ी समस्याएँ हैं।

महिलाओं के साथ होने वाली ऐसी घटनाओं में अक्सर देखा जाता है कि वे न तो उस समय और न ही घटना के बाद इसका ज़िक्र करती हैं। महिलाएँ न तो घर में अपने साथ होने वाली हिंसा के बारे में बताती हैं और न पुलिस में उसके खिलाफ शिकायत दर्ज कराती हैं। प्राय: वे समझती हैं कि महिलाओं के साथ ऐसा ही होता आया है और इसमें बदलाव नहीं लाया जा सकता है।

अध्याय
4

महिला संगठन
(Women's Organizations)

4.1 आर्य महिला समाज
4.2 भारत महिला परिषद
4.3 स्त्री जरथ्रोस्टी मंडल
4.4 भारत स्त्री महामंडल
4.5 भारत में महिलाओं की राष्ट्रीय परिषद
4.6 वुमेन्स इंडियन एसोसिएशन
4.7 अखिल भारतीय महिला सम्मेलन
4.8 सेवा
4.9 सहज
4.10 अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति - एडवा
4.11 भारतीय ग्रामीण महिला संघ
4.12 फिक्की लेडीज़ ऑर्गेनाइज़ेशन - एफ.एल.ओ.
4.13 वुमनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया
4.14 श्री महिला गृह उद्योग लिज्जत पापड़
4.15 संपदा ग्रामीण महिला संस्था
4.16 फ्रेंड्स ऑफ वुमन्स वर्ल्ड बैंकिंग, इंडिया
4.17 द कॉन्फेडरेशन ऑफ वुमन इन्टरप्रेन्योर्स
4.18 स्वाधीन
4.19 स्वयं
4.20 स्वाभिमान
4.21 आदिवासी/मूल लोगों का अखिल भारतीय समन्वय मंच
4.22 वाई.डब्ल्यू.सी.ए. ऑफ इंडिया
4.23 महिला उत्पीड़न विरोधी मंच, मुंबई
4.24 अप्पन समाचार
4.25 संहिता जेंडर रिसोर्स सेन्टर
4.26 अक्षरा
4.27 मजलिस
4.28 भारतीय महिला वैज्ञानिक संगठन
4.29 मैत्रेयी
4.30 महिला अध्ययन इकाई
4.31 महिला विकास अध्ययन केन्द्र
4.32 एकल नारी शक्ति संगठन
4.33 राष्ट्रीय महिला आयोग

भारत में महिला संगठनों की जड़ें 19वीं शताब्दी में हुए समाज सुधारों से जुड़ी हुई हैं, जिनमें महिलाओं से संबद्ध मुद्दों को उठाया गया और महिला संगठनों की शुरुआत की गई। 19वीं शताब्दी के अंत तक पहले स्थानीय स्तर पर और उसके बाद राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं ने भी स्वयं अपने संगठन बनाने शुरू कर दिये थे। स्वतंत्र भारत में बड़ी संख्या में महिला स्वयंसेवी समूह अस्तित्व में आए जिन्होंने पितृसत्ता को चुनौती देते हुए महिलाओं के विभिन्न मुद्दों को उठाया। इनमें महिलाओं के विरुद्ध हिंसा तथा राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की अधिकाधिक भागीदारी महत्त्वपूर्ण थी। कुछ प्रमुख महिला संगठनों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है:

4.1 आर्य महिला समाज *(Arya Mahila Samaj)*

पंडित रमाबाई ने 1882 में नवशिक्षित महिलाओं को प्रश्रय देने के लिये पुणे एवं पश्चिमी भारत के अन्य भागों में इस संगठन की स्थापना की। इसके तहत बाल विवाह का विरोध, विधवाओं की स्थिति तथा महिला शिक्षा जैसे मुद्दों पर बल दिया गया।

4.2 भारत महिला परिषद *(Bharat Mahila Parishad)*

महिलाओं से संबंधित सामाजिक मुद्दों पर एक विचार मंच के रूप में राष्ट्रीय सम्मेलन (National Conference) द्वारा 1905 में महिला शाखा (Women Wing) के रूप में भारत महिला परिषद का गठन किया गया। यह संगठन बाल विवाह, विधवाओं की दशा, दहेज एवं अन्य कुप्रथाओं पर केंद्रित था।

अध्याय
5

शहरीकरण/नगरीकरण (Urbanization)

5.1 परिचय
5.2 भारत में शहरीकरण
5.3 भारत में शहरीकरण के कारण
5.4 शहरीकरण का भारतीय समाज पर प्रभाव
5.5 भारत में शहरीकरण की समस्याएँ
5.6 भारत में शहरीकरण की चुनौतियाँ
5.7 भारत में शहरीकरण की चुनौतियों से निपटने के सुझाव
5.8 भारत में शहरीकरण से संबंधित योजनाएँ
5.9 ग्रामीण विकास
5.10 ग्रामीण विकास हेतु केंद्र की प्रमुख योजनाएँ
5.11 रियल एस्टेट (विनियमन और विकास) अधिनियम, 2016
5.12 पथ विक्रेता (आजीविका संरक्षण और पटरी व्यापार विनियमन) कानून, 2014

5.1 परिचय *(Introduction)*

सामान्य अर्थों में शहरीकरण से आशय उस प्रक्रिया से है जिसमें ग्रामीण लोग शहरों में निवास करने लगते हैं तथा कृषि-कार्यों को छोड़कर अन्य व्यवसाय अपनाने लगते हैं। इस प्रक्रिया में ग्रामीण अधिवासों का नगरीय अधिवासों में रूपांतरण होता है, जिससे नगरों का विकास एवं प्रसार होता है।

हालाँकि, शहरीकरण की कोई एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं है। विभिन्न विद्वानों ने इसे अलग-अलग संदर्भों में परिभाषित किया है, जैसे एक अर्थशास्त्री के लिये शहरीकरण का अर्थ कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था से उद्योग आधारित अर्थव्यवस्था की ओर कदम बढ़ाना है। एक जनसंख्याशास्त्री की दृष्टि से जब ग्रामीण आबादी की तुलना में शहरी आबादी में समानुपातिक वृद्धि होती है तो वह इसे शहरीकरण कहता है। इसी प्रकार समाजशास्त्री के नज़रिये से ग्रामीण समाज का शहरी समाज में बदलना ही शहरीकरण है। वह लोक संस्कृति को शहरी संस्कृति में बदलने को शहरीकरण मानता है। भूगोल के क्षेत्र में प्राकृतिक पर्यावरण का शहरी पर्यावरण में बदलना तथा नए शहरों की उत्पत्ति और पुराने नगरों का फैलाव शहरीकरण है। शहरीकरण की इन सभी परिभाषाओं को अगर मिलाकर देखें तो कहा जा सकता है कि शहरीकरण ग्रामीण अधिवासों से नगरों के रूप में कायांतरण की एक समुचित विधि है, जिससे व्यवसाय, अर्थव्यवस्था, भूमि उपयोग, समाज एवं संस्कृति, जीवन और रहन-सहन के स्तर तथा अन्य मानव मूल्यों में गुणात्मक और परिमाणात्मक परिवर्तन क्रमशः स्पष्ट होने लगते हैं।

5.2 भारत में शहरीकरण *(Urbanization in India)*

भारत में शहरीकरण सिंधु घाटी सभ्यता के युग से ही हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे नगरों के रूप में देखने को मिलता है। माना जाता है कि शहरीकरण का दूसरा दौर बुद्ध और महावीर के समय तथा तीसरा दौर मध्ययुग से शुरू हुआ। 18वीं शताब्दी में यूरोपियों के भारत आगमन के बाद शहरीकरण की प्रक्रिया में तेज़ी आई।

प्राचीन नगरों की बात की जाए तो भारत में 2000 से अधिक वर्षों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि वाले अनेक नगर हैं। इनमें से अधिकांश का विकास धार्मिक अथवा सांस्कृतिक केंद्रों के रूप में हुआ है। वाराणसी इनमें से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नगर है। प्रयाग (इलाहाबाद), पाटलिपुत्र (पटना), मदुरै, कुरुक्षेत्र आदि प्राचीन नगरों के कुछ अन्य उदाहरण हैं। इसी तरह मौजूदा कई नगरों का इतिहास मध्यकाल से जुड़ा हुआ है। इनमें दिल्ली, हैदराबाद, जयपुर, लखनऊ, आगरा और नागपुर महत्त्वपूर्ण हैं। पश्चिमी देशों से आए नए शासकों ने भारत में अनेक नगरों का विकास किया। शुरुआती दौर में तटीय क्षेत्रों में दमन, गोवा, पुदुच्चेरी इत्यादि जैसे व्यापारिक पत्तन विकसित हुए। ब्रिटिश सरकार ने तीन शहरों बंबई, मद्रास और कोलकाता पर अपनी पकड़ मज़बूत की और उनका अंग्रेज़ी शैली में निर्माण किया। ब्रिटिश सरकार ने प्रशासनिक केंद्रों व ग्रीष्मकालीन विश्राम स्थलों के रूप में पर्वतीय नगरों का विकास किया। इनमें शिमला, डलहौजी, नैनीताल आदि प्रमुख हैं। आधुनिक उद्योगों के विकास के साथ भी अनेक नगरों का जन्म हुआ, जैसे- जमशेदपुर, राउरकेला, दुर्गापुर, विशाखापत्तनम आदि। आज़ादी के बाद अनेक नगर प्रशासनिक केंद्रों के रूप में अस्तित्व में आए। इनमें मुख्यतः विभिन्न राज्यों की राजधानियाँ सम्मिलित हैं। कुछ पुराने नगर महानगरों के चारों ओर सहायक नगरों के रूप में विकसित हुए, जैसे- दिल्ली के चारों ओर गाज़ियाबाद, फरीदाबाद, बहादुरगढ़ और गुरुग्राम इत्यादि।

अध्याय
6

भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के प्रभाव (Effects of Globalisation on Indian Society)

6.1 परिचय
6.2 भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव
6.3 भारतीय अर्थव्यवस्था पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.4 भूमंडलीकरण और राजनीतिक परिवर्तन
6.5 भारतीय संस्कृति पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.6 भारतीय शिक्षा पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.7 भारतीय महिलाओं पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.8 भारतीय सिनेमा पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.9 भारतीय भाषाओं पर भूमंडलीकरण के प्रभाव
6.10 भारतीय पर्यावरण पर भूमंडलीकरण के प्रभाव

6.1 परिचय *(Introduction)*

भूमंडलीकरण वस्तुत: एक प्रक्रिया को इंगित करता है जिसमें व्यापार के वैश्विक नेटवर्क (Global Network of Trade), संचार, आव्रजन (Immigration) और परिवहन के माध्यम से अर्थव्यवस्थाओं, समाजों एवं संस्कृतियों का एकीकरण हो गया है।

अभी हाल तक भूमंडलीकरण को मुख्यत: विश्व के आर्थिक पक्षों- व्यापार, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, अंतर्राष्ट्रीय पूंजी प्रवाह आदि तक केंद्रित कर देखा जाता था, लेकिन अब इसे व्यापक संदर्भों में देखा जा रहा है। इसके अन्तर्गत संस्कृति, मीडिया, तकनीक तथा सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक गतिविधियों और यहाँ तक कि जैविक गतिविधियों, जैसे- जलवायु परिवर्तन संबंधी मुद्दों को भी शामिल किया गया है।

आज भूमंडलीकरण के प्रभाव से कोई भी देश अछूता नहीं है। किसी-न-किसी रूप में इसका प्रभाव सभी देशों पर दिखाई पड़ता है। भारतीय लोगों के जीवन, संस्कृति, रुचि, फैशन, प्राथमिकता इत्यादि पर भी भूमंडलीकरण का व्यापक प्रभाव पड़ा है। एक तरफ इसने आर्थिक विकास को गति और प्रौद्योगिकी का विस्तार कर लोगों के जीवन-स्तर को सुधारने में मदद की है तो दूसरी ओर स्थानीय संस्कृति और परंपरा में सेंध लगाकर हम पर विदेशी संस्कृतियों को थोपने का प्रयास किया है। भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के प्रभाव को नीचे दिये गए विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत देखा जा सकता है।

6.2 भारतीय समाज पर भूमंडलीकरण के सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव *(Negative and Positive Effects of Globalisation on Indian Society)*

सामान्य अर्थ में भूमंडलीकरण एक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और वैश्विक व्यवस्था है, जिसमें बाज़ारी ताकतें इतनी शक्तिशाली होती हैं कि उनका प्रभाव जीवन के हर क्षेत्र पर देखा जा सकता है। इस व्यवस्था के अंतर्गत उपभोग तथा उपभोक्तावाद, राष्ट्र तथा राज्य की संप्रभुता का ह्रास, अर्थव्यवस्था का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होना एवं सूचनाओं का बिना किसी समय को बर्बाद किये हुए प्राप्त करना शामिल है।

इस वैश्विक ग्राम की अवधारणा में विश्व के लगभग 200 देश तथा 7 अरब जनसंख्या प्रभावित है, जिसमें लगभग 60% एशियाई, 13% अफ्रीकी, 12% यूरोपियन, 10% लैटिन अमेरिकी, 6.5% अमेरिका, मैक्सिको, कनाडा तथा शेष 5-6% अन्य हैं।

भारत में उदारीकरण की प्रक्रिया 1990 के दशक के प्रारंभ में शुरू हुई, जिसे आर्थिक सुधार के रूप में जाना जाता है। 1990 में, सोवियत संघ के विघटन के साथ ही शीतयुद्ध की समाप्ति हो गई, जिसके कारण राजनैतिक प्रभुत्व के स्थान पर आर्थिक प्रभुत्व की अवधारणा प्रारंभ हुई। जब से यह अवधारणा प्रारंभ हुई, विश्व दो खेमों में विभाजित है; एक जो भूमंडलीकरण का समर्थन करता है और दूसरा जो इसे शोषणकारी उपनिवेशवादी मानते हुए इसका विरोध करता है।

वैश्वीकरण में यही प्रक्रिया और विस्तृत रूप में स्वीकारी गई, जिसमें अहस्तक्षेप को मात्र एक देश या अर्थव्यवस्था तक सीमित न रख पूरे विश्व पर लागू किया गया।

भूमंडलीकरण के तीन पक्ष हैं- पहला, राजनीतिक क्षेत्र - जहाँ संयुक्त राष्ट्र संघ नियंत्रित करता है; दूसरा, आर्थिक क्षेत्र- जहाँ IMF, WTO, विश्व बैंक आदि नियंत्रित करते हैं तथा तीसरा, सामाजिक क्षेत्र- जहाँ UNICEF जैसी संस्थाएँ नियंत्रित करती हैं।

अध्याय
7

सामाजिक सशक्तीकरण (Social Empowerment)

7.1 परिचय
7.2 सामाजिक सशक्तीकरण के तत्त्व
7.3 सामाजिक सशक्तीकरण की आवश्यकता क्यों?
7.4 सामाजिक सशक्तीकरण की दिशा में किये गए प्रयास

7.1 परिचय *(Introduction)*

सामाजिक सशक्तीकरण का अर्थ है- समाज में सामाजिक, शैक्षिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं अन्य प्रकार के अवसरों से वंचित समुदायों की सामाजिक, शैक्षिक, राजनीतिक व आर्थिक शक्ति में वृद्धि करना और उनका स्वयं पर विश्वास में बढ़ोतरी करना। दूसरे शब्दों में, समाज के कमज़ोर वर्ग के लोगों को आधारभूत अवसर उपलब्ध कराने की प्रक्रिया ही सामाजिक सशक्तीकरण है। भारत के संदर्भ में देखें तो समाज के कमज़ोर वर्गों में महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़ा वर्ग, कई धार्मिक समुदायों, तृतीय लिंगियों (Third Genders) आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।

सामाजिक सशक्तीकरण के अंतर्गत निम्नलिखित घटकों को शामिल किया जा सकता है-

- स्वयं की निर्णय लेने की क्षमता।
- सूचनाओं और संसाधनों तक पहुँच, ताकि उचित निर्णय लिये जा सकें।
- सामूहिक निर्णय प्रक्रिया में अपनी बात रख पाने की क्षमता।
- विकल्पों का बहुतायत होना।
- परिवर्तन के प्रति सकारात्मक सोच होना।
- स्वयं तथा समूह के विकास के लिये सीखने की क्षमता का होना।
- लोकतांत्रिक तरीकों से दूसरों की सोच में परिवर्तन लाने की क्षमता।
- विकास तथा परिवर्तन की प्रक्रियाओं में सतत् भागीदारी।
- कमियों से पार पाना तथा स्वयं की छवि का सकारात्मक विकास।

उपरोक्त घटकों का विश्लेषण करने पर सामाजिक सशक्तीकरण के कुछ प्रमुख तत्त्व (Elements) उभरकर सामने आते हैं जिनसे इन कमज़ोर वर्गों को सशक्त बनाकर इन्हें विकास की मुख्य धारा में शामिल किया जा सकता है। ये प्रमुख तत्त्व हैं-

- सूचनाओं तक पहुँच (Access to Information)
- समावेशन और भागीदारी (Inclusion and Participation)
- जवाबदेही (Accountability)
- स्थानीय सांगठनिक क्षमता (Local Organizational Capacity)

7.2 सामाजिक सशक्तीकरण के तत्त्व *(Elements of Social Empowerment)*

सूचनाओं तक पहुँच *(Access to Information)*

सूचना शक्ति का सूचक है। सूचना से लैस नागरिक अवसरों का समुचित लाभ उठाने, सेवाओं तक बेहतर पहुँच बनाने, अधिकारों के प्रयोग करने, प्रभावी और बेहतर मोल-भाव करने एवं सरकारी-गैर-सरकारी संस्थाओं की जवाबदेही सुनिश्चित करा पाने में सक्षम होते हैं। दूसरी ओर, प्रासंगिक, सामाजिक तथा आसानी से समझ आ सकने वाली सूचनाओं के अभाव में निर्धन लोगों के लिये प्रभावी कार्रवाई कर पाना असंभव है। सूचना-प्रसार से अभिप्राय केवल लिखे हुए शब्द या वाक्य से नहीं है, बल्कि सामूहिक विमर्श (Group Discussions), कविता (Poetry), किवदंती, वाद-विवाद, नुक्कड़ नाटक, रेडियो कार्यक्रम, इंटरनेट,

अध्याय
8

सांप्रदायिकता (Communalism)

8.1 सांप्रदायिकता का अर्थ
8.2 सांप्रदायिकता के विभिन्न चरण
8.3 सांप्रदायिकता के कारण
8.4 सांप्रदायिकता के दुष्परिणाम
8.5 सांप्रदायिकता दूर करने के प्रयास
8.6 सांप्रदायिकता से निपटने के सुझाव

8.1 सांप्रदायिकता का अर्थ *(Meaning of Communalism)*

सामान्य अर्थों में सांप्रदायिकता किसी विशेष धर्म अथवा धार्मिक संप्रदाय की उग्र भावना का द्योतक है जिसमें दूसरे धर्मों अथवा धार्मिक संप्रदायों के प्रति विरोध और घृणा का प्रदर्शन किया जाता है। इसके आधार के रूप में वह काल्पनिक या वास्तविक भय कार्य करता है जिसके अंतर्गत एक विशेष धार्मिक समूह इस आशंका से घिरा रहता है कि दूसरे धार्मिक समूह उसके विरोधी हैं और उसे नष्ट करने के लिये प्रतिबद्ध हैं। सांप्रदायिकता के अंतर्गत एक ऐसी मानसिकता कार्य करती है जिसमें विरोध, घृणा अथवा हिंसा के माध्यम से अन्य धार्मिक समूहों को दबाने का प्रयत्न किया जाता है। सांप्रदायिकता का धार्मिक कट्टरता के साथ प्रत्यक्ष संबंध होता है क्योंकि धार्मिक कट्टरता में होने वाली वृद्धि या कमी के साथ सांप्रदायिकता में भी वृद्धि या कमी होती रहती है। वर्तमान समय में सांप्रदायिकता की संकल्पना में राजनीतिक उद्देश्य भी सम्मिलित होते जा रहे हैं क्योंकि आज राजनीतिक स्वार्थों की परिपूर्ति हेतु इसका खुलकर उपयोग किया जा रहा है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि सांप्रदायिकता एक ऐसी अभिवृत्ति है जिसके अंतर्गत एक विशेष धर्म अथवा संप्रदाय के अनुयायी अपने धार्मिक एवं राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिये स्वयं के समूह को अन्य धार्मिक समूहों के विरुद्ध संगठित करते हैं तथा आवश्यकता के अनुरूप उन्हें उग्र प्रदर्शनों एवं हिंसा के लिये उकसाते हैं।

यदि भारत के संदर्भ में देखें तो प्राचीन काल से ही यह विभिन्न धर्मों, संप्रदायों, विचारधाराओं तथा परम्पराओं का देश रहा है। यहाँ न केवल विभिन्न धर्मों का विकास हुआ बल्कि एक धर्म के अंदर भी विभिन्न मतावलंबियों का निर्माण होता रहा। हालाँकि, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इन विभिन्न विचारधारा वाले समूहों ने यहाँ की संस्कृति को पुष्पित-पल्लवित करने में अहम योगदान दिया लेकिन धीरे-धीरे इन समूहों के बीच अलग-अलग आधारों पर पृथक्करण की भावना सबल होती गई। इस भावना से ग्रस्त होकर प्रत्येक धार्मिक समूह स्वयं को एक अलग इकाई मानकर अपने हितों को प्राथमिकता देने लगा तथा ईर्ष्या, द्वेष, विरोध, संघर्ष और हिंसा के माध्यम से दूसरे धार्मिक समूहों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयास करने लगा। धार्मिक पूर्वाग्रहों और धार्मिक अंधभक्ति की यही प्रवृत्ति सांप्रदायिकता है जो वर्तमान में भारतीय समाज के सामने एक भयावह समस्या के रूप में विद्यमान है।

8.2 सांप्रदायिकता के विभिन्न चरण *(Different Phases of Communalism)*

प्रसिद्ध इतिहासकार विपिन चंद्र के अनुसार सांप्रदायिकता के तीन चरण होते हैं और उनमें एक तारतम्यता देखी जा सकती है। इसके पहले चरण में एक ही धर्म के सभी अनुयायियों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि हित एक-समान होते हैं। इसमें समाज को जाति, वर्ण, वर्ग, भाषा, क्षेत्र आदि के स्थान पर देखने की बजाय धर्म के आधार पर देखा जाने लगता है। लोग धर्म पर आधारित समुदायों के सदस्यों के रूप में अपने सामाजिक और राजनीतिक कर्त्तव्यों का संचालन एवं सामूहिक हितों की सुरक्षा करने लगते हैं। किसी व्यक्ति, दल या आंदोलन में सांप्रदायिक विचारधारा का जन्म पहले चरण में ही होता है। हालाँकि, वे यह नहीं मानते कि धार्मिक समुदायों के हित अनिवार्य रूप से परस्पर विरोधी हो सकते हैं।

सांप्रदायिकता का दूसरा चरण इस विश्वास को अभिव्यक्त करता है कि भारत जैसे बहुभाषी समाज में एक धर्म के अनुयायियों के सांसारिक हित यानी सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक हित किसी दूसरे धर्म के लोगों से भिन्न हैं। इसे नरमपंथी या उदार सांप्रदायिकता भी कहा जाता है। इसमें विश्वास करने वालों की कुछ आस्था उदारवादी लोकतांत्रिक, मानवतावादी और राष्ट्रवादी मूल्यों में होती है। नरमपंथी सांप्रदायिकता मानती है कि भारत का निर्माण ऐसे विभिन्न धार्मिक समुदायों से मिलकर हुआ

अध्याय
9

क्षेत्रवाद (Regionalism)

9.1 परिचय	9.6 क्षेत्रवाद और संघ से पृथकता
9.2 क्षेत्रवाद से आशय	9.7 क्षेत्रवाद के लिये उत्तरदायी कारक
9.3 क्षेत्रवाद और पृथक् राज्यों की मांग	9.8 क्षेत्रवाद के परिणाम
9.4 क्षेत्रवाद और अंतर्राज्यीय तनाव	9.9 क्षेत्रवाद की समस्या के समाधान हेतु उपाय
9.5 क्षेत्रवाद और केंद्र-राज्य संघर्ष	9.10 नए राज्यों के गठन की मांग

9.1 परिचय *(Introduction)*

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समूह में रहता है और उसका समूह के साथ भावनात्मक संबंध और इसके कारण उसमें समूह के प्रति लगाव का भाव भी उत्पन्न होता है। यह भाव उसमें सुरक्षा की भावना का विकास भी करता है। इसी तरह उसकी उन भौगोलिक परिस्थितियों के प्रति भी आस्था उत्पन्न हो जाती है, जिसमें वह रहता है और उसके सांस्कृतिक समानता के तत्त्वों को महसूस करता है। इसके ज़रिये ही उसके विविध सामाजिक हितों की पूर्ति भी होती है। इस प्रकार, भौगोलिक रूप से किसी स्थान पर कुछ प्रक्रियाएँ तथा धारणाएँ समाज के अन्य भागों से भिन्न हों और वे लंबे समय से चली आ रही हों तो उस भाग को एक क्षेत्र कहा जा सकता है। ये प्रक्रियाएँ भौगोलिक, धार्मिक, भाषायी, रीति-रिवाज़ संबंधी, आर्थिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक आदि पर आधारित हो सकती हैं, लेकिन किसी भी क्षेत्र के पृथक् स्वरूप के लिये सबसे प्रमुख बात वहाँ के लोगों में आपसी समानता और समरूपता तथा दूसरे क्षेत्रों से अलगाव की भावना है। जैसे यदि कोई व्यक्ति सोचता है कि वह तेलंगाना का निवासी है तो इसका आशय यह हुआ कि वह स्वयं को आंध्र प्रदेश के अन्य लोगों से भिन्न समझता है। यह संभव है कि समूचे आंध्र प्रदेश के लोग अन्य राज्य के लोगों से स्वयं को भिन्न समझते हों। हालाँकि, इस तरह की भावनाएँ स्वाभाविक हैं क्योंकि मनुष्य जहाँ रहता है उसे वह अन्य क्षेत्र से भिन्न समझता है तथा अपनी अलग पहचान और अस्तित्व महसूस करता है। लेकिन जब ये भावनाएँ संकुचित एवं संकीर्ण क्षेत्रीय स्वार्थों की पूर्ति को लेकर राष्ट्रीयता की भावना के विपरीत हो जाती हैं तो यह क्षेत्रवाद के रूप में सामने आती हैं जो अनेक विघटनकारी प्रवृत्तियों, आंदोलनों तथा अभियानों को जन्म देकर राष्ट्रीय एकता व अखंडता के लिये खतरनाक साबित होता है।

9.2 क्षेत्रवाद से आशय *(Meaning of Regionalism)*

परिभाषा के तौर पर देखें तो कहा जा सकता है कि क्षेत्रवाद एक विचारधारा है जिसका संबंध एक देश या देश के किसी हिस्से में उस क्षेत्र से है जो सामाजिक, आर्थिक, भाषायी, सांस्कृतिक, भौगोलिक आदि कारणों से अपने अलग अस्तित्व के लिये संघर्षरत है। दूसरे शब्दों में, क्षेत्रवाद किसी क्षेत्र के लोगों में उस भावना और प्रयत्नों का प्रतिनिधित्व करता है जिसके द्वारा वे अपने क्षेत्र विशेष के लिये आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक शक्तियों में वृद्धि करना चाहते हैं। यदि भारत के संदर्भ में देखें तो राष्ट्र अथवा राज्य की तुलना में किसी छोटे से क्षेत्र के प्रति लगाव, भक्ति या आकर्षण ही क्षेत्रवाद है। इसका उद्देश्य संकुचित क्षेत्रीय स्वार्थों की परिपूर्ति है और इस दृष्टि से यह राष्ट्रीयता की भावना के विपरीत है।

भारतीय राजनीति में क्षेत्रवाद को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत देखा जा सकता है- क्षेत्रवाद और पृथक् राज्यों की मांग, क्षेत्रवाद और अंतर्राज्यीय तनाव, क्षेत्रवाद और केंद्र-राज्य संघर्ष, क्षेत्रवाद और संघ से पृथकता।

9.3 क्षेत्रवाद और पृथक् राज्यों की मांग *(Regionalism and Demand of Separate States)*

इसके तहत देश के ढाँचे के भीतर ही भाषा, पिछड़ापन, भौगोलिक, सांस्कृतिक आदि विशिष्टताओं के आधार पर एक पृथक् राज्य के गठन की मांग की जाती रही है। इस मांग को पूरा करने के लिये केंद्र सरकार पर आंदोलनों आदि के माध्यम से दबाव बनाया जाता है। ये आंदोलन कई बार हिंसक रूप तक धारण कर लेते हैं।

अध्याय
10

जनसंख्या एवं संबद्ध मुद्दे
(Population and Associated Issues)

10.1 परिचय	10.10 किशोर जनसंख्या
10.2 अधिक जनसंख्या	10.11 भारत की जनगणना 2011
10.3 ग्रामीण जनसंख्या की अधिकता	10.12 जनांकिकीय संक्रमण का सिद्धांत
10.4 उच्च वृद्धि दर	10.13 जनांकिकीय लाभांश
10.5 निम्न लिंगानुपात	10.14 जनसंख्या वृद्धि के परिणाम
10.6 अधिक निर्भरता की स्थिति	10.15 प्रवासन
10.7 नृजातीय विविधता	10.16 जनसंख्या नियंत्रण के उपाय
10.8 आयु संरचना	10.17 जनसंख्या नियंत्रण के सुझाव
10.9 व्यावसायिक संरचना	10.18 जनसंख्या स्थिरता कोष

10.1 परिचय *(Introduction)*

राज्य के कार्यों को सुचारू रूप से पूरा करने हेतु जनसंख्या संबंधी आँकड़े आवश्यक होते हैं। इसके अभाव में किसी नीति या योजना का लाभ वास्तविक लाभार्थियों तक नहीं पहुँचाया जा सकता है। राज्य एवं सरकार को जनसंख्या संबंधी आँकड़ों से सामाजिक प्रास्थिति के बारे में आसानी से पता चलता है। उदाहरण के लिये मातृ मृत्यु दर से प्रसव के दौरान होने वाली मृत्यु का पता लगाकर स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं में सुधार किया जाता है। इस प्रकार जनसंख्या का वृहद् सामाजिक जुड़ाव है।

जनसंख्या संबंधी प्रमुख सिद्धांतों में माल्थस तथा मार्क्स का जनसंख्या संबंधी सिद्धांत महत्त्वपूर्ण हैं-

मार्क्स के द्वारा दिये गए जनांकिकीय संक्रमण सिद्धांत के तहत जनसंख्या के बारे में कहा गया कि समाज में जिस प्रकार से उन्नति आएगी जनसंख्या में भी उसी दर से वृद्धि होगी। इस आधार पर उन्होंने तीन चरण निर्धारित किये। पहले चरण में जनसंख्या में कमी होने के पीछे समाज का अल्प विकसित एवं तकनीकी रूप से पिछड़ा होना बताया गया। साथ ही दूसरे चरण में जनसंख्या में वृद्धि देखी गई जब इन कारकों में सुधार पाया गया। किंतु तीसरे चरण में जनसंख्या संक्रमणकालीन अवस्था में चली जाती है। जब समाज औद्योगिक स्टेज को प्राप्त कर लेता है तभी अधिक जनसंख्या समाज के लिये चुनौती भी बनती है।

जनसंख्या के उपरोक्त सैद्धान्तिक पक्ष के अलावा अन्य पहलू भी हैं। समाजशास्त्र के दृष्टिकोण से जनसंख्या का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है क्योंकि जनसंख्या में होने वाले परिवर्तन का समाज से सीधा संबंध होता है। जनसंख्या के अंतर्गत जन्म, मृत्यु, प्रवसन एवं जनसंख्या की संरचना तथा संगठन का अध्ययन किया जाता है, जिनका संबंध व्यापक सामाजिक मुद्दों से होता है।

माल्थस के अनुसार "उत्पादन की तुलना में जनसंख्या में तीव्र वृद्धि की प्रवृत्ति होती है। अर्थात् जनसंख्या में गुणोत्तर वृद्धि होती है तो उत्पादन में समांतर वृद्धि पाई जाती है। इससे स्पष्ट है कि उत्पादन की तुलना में जनसंख्या वृद्धि अधिक हो जाएगी जिससे भरण-पोषण की समस्या उत्पन्न होगी, परिणामस्वरूप जनसंख्या संबंधी सामान्य संकल्पनाओं के रूप में निम्नलिखित का अध्ययन महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

बढ़ती जनसंख्या से सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होंगी। अत: इनके समाधान हेतु माल्थस जनसंख्या नियंत्रण के उपायों की बात करते हैं, जिनमें प्रमुख रूप से प्राकृतिक उपाय अपनाते हुए संयम बरतने के साथ अधिक उम्र में विवाह करने पर ज़ोर दिया गया है। किंतु इससे भी जनसंख्या नियत्रण नहीं होने पर अन्य साधन अपनाने की बात की गई है।

भारत की स्थिति का अध्ययन करने वाले विद्वानों की सामान्य धारणा यही है कि भारत एक पिछड़ी हुई जनांकिकीय संरचना वाला देश है।

अध्याय
11

गरीबी और विकासात्मक मुद्दे
(Poverty and Developmental Issues)

11.1 परिचय	11.8 गरीबी के कारण
11.2 निर्धनता की विभिन्न अवधारणाएँ	11.9 भारतीय संदर्भ में गरीबी के कारण
11.3 भारत के संदर्भ में गरीबी	11.10 निर्धनों की विभिन्न समस्याएँ
11.4 भारत में गरीबी का अनुमान	11.11 गरीबी उन्मूलन के उपाय
11.5 गरीबी की जड़ें	11.12 गरीबी निवारण हेतु राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय लक्ष्य
11.6 निर्धनता जाल	11.13 भारत में गरीबी कम करने हेतु सुझाव
11.7 गरीबी के प्रकार	11.14 गरीबी निवारण से संबंधित प्रमुख सरकारी कार्यक्रम

11.1 परिचय *(Introduction)*

निर्धनता का सामान्य अभिप्राय है- धन के अभाव की स्थिति। इस अर्थ में यह मात्र एक आर्थिक समस्या प्रतीत होती है, लेकिन व्यापक संदर्भ में इसके सामाजिक एवं राजनीतिक आयाम भी हैं। निर्धनता आय तथा धन के संदर्भ में, जो व्यक्ति के पास है और जो 'होना चाहिये' के बीच के अंतराल को इंगित करती है। साथ ही यह व्यक्ति की शक्तिहीनता तथा संसाधनहीनता की स्थिति को दर्शाती है। इस आर्थिक विषमता के परिणामस्वरूप सामाजिक विषमता उत्पन्न होती है।

11.2 निर्धनता की विभिन्न अवधारणाएँ *(Different Concepts of Poverty)*

निर्धनता की परिभाषा, उसकी व्याख्या तथा उसके संदर्भ में दिये गए सुझावों तथा समाधानों को प्रभावित कर सकती है। अत: निर्धनता की परिभाषा तथा उसके विभिन्न आयामों का विस्तारित विश्लेषण आवश्यक है। निर्धनता के विभिन्न आयाम बताए गए हैं, जैसे- जीविका अथवा आय के निश्चित स्रोत का अभाव, इस संदर्भ में व्यक्ति के पास अवसरों तथा रणनीतियों का अभाव, धन तथा भूमि जैसे संसाधनों तक पहुँच का नहीं होना, असुरक्षा की भावना एवं संसाधनों के अभाव के कारण अन्य व्यक्तियों के साथ सामाजिक संबंध रखने और विकसित करने की अक्षमता आदि।

निर्धनता की परिभाषा देते हुए प्राय: दो स्थितियों का उपयोग किया जाता है। पहला, एक व्यक्ति को जीवित रहने के लिये न्यूनतम कितनी आय की आवश्यकता होती है। यह वह स्थिति है जो शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में यानी कि जीवित तथा सुरक्षित रहने की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में समर्थ है। ये न्यूनतम आवश्यकताएँ अन्य सामाजिक अस्मिता तथा आत्मबोध आदि की आवश्यकताओं से भिन्न हैं। वस्तुत: इस आय स्तर पर व्यक्ति अपने जीवन-निर्वाह की मूलभूत आवश्यकताओं की ही पूर्ति कर पाता है (प्रत्येक समाज में वहाँ की जीवन शैली के अनुसार भिन्न होती है)। इस संदर्भ में प्राय: पोषण का न्यूनतम वांछनीय कैलोरी स्तर या प्रति व्यक्ति खपत-व्यय का हिसाब लगाया जाता है।

'निर्धनता' की दूसरी अवधारणा, भौतिक वस्तुओं और संपत्ति की कमी के अधिक विस्तृत पक्षों को समाहित करती है। इसके अंतर्गत न्यूनतम पोषण संबंधी आवश्यकताएँ, स्वास्थ्य संबंधी आवश्यकताएँ तथा जीवन निर्वाह के न्यूनतम स्तर को बनाए रखने की आवश्यकता को भी समाहित किया जाता है।

गरीबी की बदलती परिभाषा *(Changing Definition of Poverty)*

संयुक्त राष्ट्र द्वारा शुरुआती दिनों में गरीबी को निश्चित मात्रा में कैलोरी या अपनी आवश्यकताओं को संतुष्ट करने वाली आय प्राप्ति की क्षमता के संदर्भ में मापा जाता था। एक गरीबी रेखा इसे परिभाषित करती थी तथा गरीबों में उन्हें शामिल किया जाता था जिनकी आय या कैलोरी प्राप्ति इससे कम हुआ करती थी। सामान्य रूप से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आय के संदर्भ में गरीबी को 1 या 2 डॉलर प्रतिदिन खर्च करने की क्षमता के आधार पर मापा जाता है। समय के साथ-साथ गरीबी मापन संबंधी चिंतन बदलता रहा है और इसमें विभिन्न आयामों को शामिल करने संबंधी विचार भी बदलते रहे हैं।

अध्याय
12

धर्मनिरपेक्षता (Secularism)

12.1 धर्मनिरपेक्षता का अर्थ	12.6 धर्मनिरपेक्ष राज्य की धारणा
12.2 धर्मनिरपेक्षता की भारतीय धारणा	12.7 क्या भारत धर्मनिरपेक्ष राज्य है?
12.3 धर्मनिरपेक्ष समाज की धारणा	12.8 धर्मनिरपेक्षता व पंथनिरपेक्षता में अंतर
12.4 क्या भारत धर्मनिरपेक्ष समाज है?	12.9 धर्मनिरपेक्ष राज्य में धर्मांतरण पर प्रतिबंध होना चाहिये?
12.5 राजनीति व धर्म का संबंध	12.10 लोकतंत्र व धर्मनिरपेक्षता में संबंध

12.1 धर्मनिरपेक्षता का अर्थ *(Meaning of Secularism)*

'धर्मनिरपेक्षता' अंग्रेज़ी शब्द 'Secularism' का अनुवाद है, जो मूलत: लैटिन शब्द 'Seculam' से बना है। 'Seculam' का अर्थ होता है- इहलोक से संबंधित। अत: शाब्दिक अर्थ की दृष्टि से 'Secularism' का अर्थ हुआ- वह विचारधारा जो मनुष्य को परलोक की चिंता छोड़कर इहलोक से संबंधित होने की प्रेरणा देती है। इसे धर्मनिरपेक्षता इसलिये कहा जाता है क्योंकि यह विचारधारा पारंपरिक धर्मों की परलोककेंद्रित (That worldly) मानसिकता का विरोध करती है।

धर्मनिरपेक्षतावाद आधुनिक काल की एक भौतिकवादी (Materialist) तथा मानववादी (Humanist) विचारधारा है जो वैज्ञानिक मनोवृत्ति (Scientific Temper) के आधार पर इहलोक के महत्त्व की स्थापना करती है। भौतिकवादी होने के कारण यह भौतिक जगत को अंतिम सत्य मानती है तथा इसके पीछे ईश्वर, आत्मा या स्वर्ग जैसी पारलौकिक सत्ताओं को स्वीकार नहीं करती। मानववादी होने के कारण यह अपने चिंतन के केंद्र में मनुष्य और उसकी सांसारिक समस्याओं को रखती है। इस विचारधारा की प्रमुख मान्यताएँ इस प्रकार हैं-

धर्मनिरपेक्षतावाद धर्म का समर्थन नहीं करता क्योंकि धर्म पारलौकिक विश्वासों पर टिका होता है जबकि धर्मनिरपेक्षतावाद ऐसे विश्वासों से तटस्थ रहता है। **धर्म की उपेक्षा या विरोध** का दूसरा कारण यह भी है कि धर्म वैज्ञानिक मनोवृत्ति तथा भौतिक विकास में बाधक बनता है जबकि कुछ विचारकों के अनुसार भौतिक विकास ही मनुष्य का वास्तविक उद्देश्य है। यहाँ यह ध्यान रखना ज़रूरी है कि धर्मनिरपेक्षतावाद मज़हब (Religion) वाले अर्थ में ही धर्म का विरोध करता है; भारतीय परंपरा के उस अर्थ में नहीं जिसमें धर्म को नैतिकता का समानार्थक माना गया है। धर्मनिरपेक्षतावाद की दूसरी प्रमुख मान्यता है- सिर्फ **इहलोक में विश्वास करना**। इस विचार का इतना अधिक महत्त्व है कि इसे कहीं-कहीं इहलोकवाद भी कहा जाता है।

धर्मनिरपेक्षतावादियों ने **विज्ञान और तकनीक के विकास पर अत्यधिक बल** दिया है। उनका दावा है कि मनुष्य का कल्याण और उसके सुखों में वृद्धि ईश्वर की प्रार्थना करने से नहीं बल्कि विज्ञान-तकनीक के विकास से ही संभव है। विज्ञान का अर्थ है- उन नियमों की खोज करना जिनके अनुसार प्रकृति संचालित होती है। तकनीक इसका अगला स्तर है। इसका अर्थ है विज्ञान के नियमों का प्रयोग इस प्रकार करना कि मनुष्य को अधिकतम सुखों की प्राप्ति हो सके। प्रो. फ्लिंट का मानना है कि धर्मनिरपेक्षतावाद वह विचारधारा है जिसके अनुसार मनुष्य का कल्याण विज्ञान-तकनीक के हाथों से संभव है।

धर्मनिरपेक्षतावादी **धर्मनिरपेक्ष नैतिकता** (Secular Morality) पर बल देते हैं। धर्म और नैतिकता के पारस्परिक संबंध को लेकर हमेशा विवाद रहा है कि नैतिकता धर्म पर निर्भर है या धर्म से स्वतंत्र है। कई पारंपरिक चिंतक मानते हैं कि जो नैतिकता धर्म पर आधारित नहीं होती, वह वस्तुत: नैतिकता होती ही नहीं। प्रो. गैलवे, दोस्त्योवस्की तथा महात्मा गांधी जैसे चिंतक इस विचार के पक्ष में थे। धर्मनिरपेक्षतावादी इस मत का खंडन करते हुए दावा करते हैं कि नैतिकता की पहचान सामाजिक प्रतिबद्धता के आधार पर होनी चाहिये, न कि धार्मिक आधार पर क्योंकि कई धार्मिक कृत्य खुद अनैतिक होते हैं (जैसे- पशुओं की बलि इत्यादि) जबकि कई धर्मनिरपेक्ष कार्य अत्यंत नैतिक होते हैं।

12.2 धर्मनिरपेक्षता की भारतीय धारणा *(Indian Notion of Secularism)*

धर्मनिरपेक्षता एक जटिल तथा गत्यात्मक अवधारणा है। भारतीय संदर्भ में धर्मनिरपेक्षता की व्याख्या भिन्न-भिन्न प्रकार से की गई है जिन्हें मोटे तौर पर तीन वर्गों में रखा जा सकता है।

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी, फ्लोचार्ट तथा मानचित्र का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- क्विक रिवीजन हेतु प्रत्येक अध्याय में महत्त्वपूर्ण तथ्यों का संकलन।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 011-47532596, +91-8130392354, 813039235456